हो गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि श्रीकृष्ण को अब वह साधारण मनुष्य और अपना सखा ही नहीं मानता; वह जान गया है कि श्रीकृष्ण सम्पूर्ण सृष्टि के मूल हैं। अर्जुन परम प्रबुद्ध हो चुका है और यह जानकर आनन्दसिन्धु में निमग्न है कि श्रीकृष्ण जैसे महान् सखा से उसका सख्य है। परन्तु साथ ही, विचार करता है कि उसके द्वारा श्रीकृष्ण को सब कारणों का कारण स्वीकार कर लेने पर भी हो सकता है कि दूसरे ऐसा न करें। अतएव श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं, इस सत्य को जीवमात्र के लिये सार्वभौम रूप से स्थापित करने के उद्देश्य से अर्जुन ने इस अध्याय में श्रीकृष्ण से अपने विश्वरूप का दर्शन कराने की प्रार्थना की है। वास्तव में जब भी किसी को श्रीकृष्ण के विश्वरूप का दर्शन होता है, तो वह अर्जुन की ही भाँति भयभीत हो जाया करता है। परन्तु श्रीकृष्ण इतने कृपामय हैं कि उस विश्वरूप का दर्शन देकर फिर से अपना मूल द्विभुज रूप धारण कर लेते हैं। श्रीकृष्ण ने बारंबार जो कुछ कहा है, अर्जुन उसे सत्य मानता है। उसका कल्याण हो, इसीलिए श्रीकृष्ण उसे उपदेश कर रहे हैं और अर्जुन भी स्वीकार करता है कि उसके मोह का निवारण उनकी अहैतुकी कृपा का ही फल है। उसे अब पूर्ण विश्वास है कि श्रीकृष्ण सब कारणों के परम कारण और जीवमात्र के अन्तर्यामी परमात्मा हैं।

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया।
त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम्।।२।।

भव=उत्पत्ति; **अप्ययौ**=प्रलय; **हि**=निःसन्देह; **भूतानाम्**=समस्त जीवों का; **श्रुतौ**=सुना है; **विस्तरशः**=विस्तार से; **मया**=मैंने; **त्वत्तः**=आपसे; **कमलपत्राक्ष**=हे कमलनयन; **माहात्म्यम्**=महिमा; **अपि**=भी; **च**=तथा; **अव्ययम्**=अविनाशी।

अनुवाद

हे कमलनयन ! मैंने जीवों की उत्पत्ति और प्रलय का तत्त्व आपसे विस्तारपूर्वक सुना है और आपकी अविनाशी महिमा भी सुनी है, जिससे इस तत्त्व की अनुभूति होती है।।२।।

तात्पर्य

अर्जुन ने श्रीकृष्ण को **कमलनयन** कहा है, क्योंकि श्रीकृष्ण के नेत्र पद्मदल के सदृश दीर्घरक्तान्त अतिरम्य हैं। श्रीकृष्ण को इस प्रकार सम्बोधित करने में उसके हृदय में उठने वाला हर्षातिरेक ही हेतु है। इसका कारण यह है कि पिछले अध्याय के अन्तिम श्लोक में उसे आश्वासन देते हुए श्रीकृष्ण ने कहा है कि उन्होंने अपने एक अंश से सम्पूर्ण सृष्टि को धारण कर रखा है। इस प्राकृत सृष्टि में जो कुछ है, उस सब के वे उद्गम हैं—अर्जुन श्रीभगवान् के मुखारविन्द से इस तत्त्व को विस्तारसहित सुन चुका है। अर्जुन को यह भी विदित है कि सारी उत्पत्ति-प्रलय के कारण होने पर भी वे उस सबसे बिलकुल असंग हैं। उनकी सर्वव्यापकता से उनके निज स्वरूप में कोई हानि नहीं आती। यही श्रीकृष्ण का अचिन्त्य ऐश्वर्य है और अर्जुन का कहना है कि उसने इस तत्त्व को पूर्ण रूप से आत्मसात् कर लिया है।